देवनागरी लिपि

देवनागरी लिपि

उद्भव और विकास

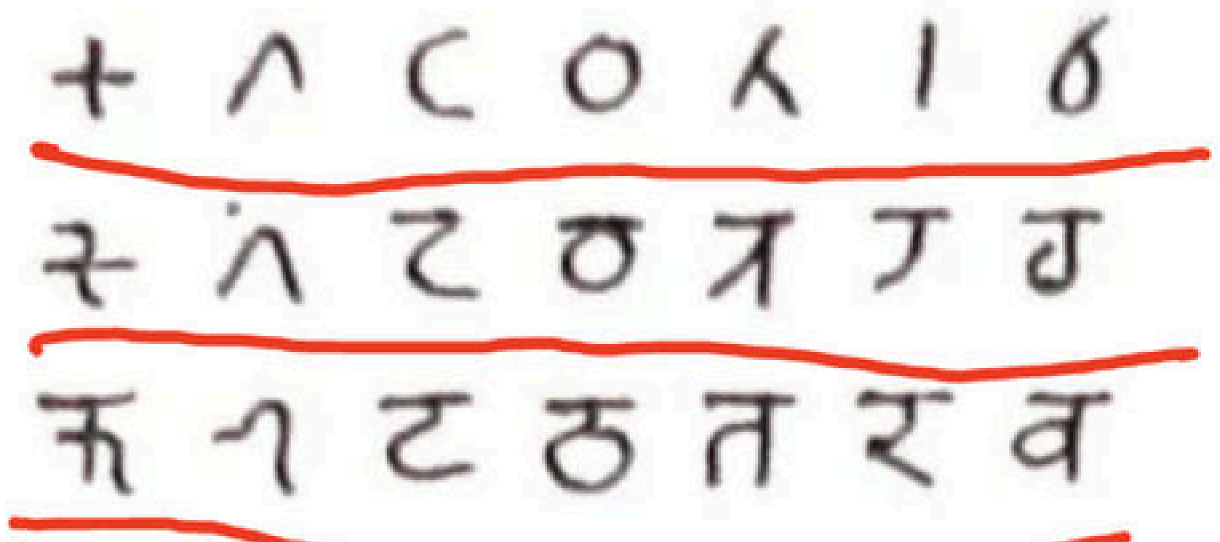
भारत की प्राचीन लिपियों में सिन्धुघाटी की लिपि, खरोष्ठी लिपि और ब्राह्मी लिपि प्रसिद्ध हैं। सिन्धुघाटी की लिपि कुछ चित्राक्षर थी और कुछ ध्वन्याक्षर। सन् 400 ई० पू० से पहले इसका व्यवहार भारत के उत्तर-पश्चिमी प्रदेश में होता था। खरोष्ठी लिपि का प्रचलन उत्तर-पश्चिमी भारत में एक हज़ार वर्ष तक रहा। यह दाहिने से बायें ओर चलती हुई लिखी जाती थी। इन दोनों लिपियों से देवनागरी का कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। प्रमाणों से जान पड़ता है कि ब्राह्मी लिपि अधिक व्यापक और प्राचीन काल से व्यवहृत रही है। बताया गया है कि इसका विकास वैदिक काल की किसी लिपि से हुआ है लिपि-विज्ञान के आचार्य डॉ० राजबली पाण्डेय का मत है कि ब्राह्मी का आविष्कार ब्रह्म या वेद की रक्षा के लिए हुआ था। इस प्रसंग में याद रहे कि ब्राह्मी की लिपिमाला में वैदिक ध्वनियों के पूरे प्रतीक विद्यमान हैं। कुछ लोग ब्रह्मा से, कुछ ब्रह्म नाम के आचार्य से और कुछ ब्राह्मण वर्ग से इसकी उत्पत्ति बताते हैं। ब्राह्मी के बहुत-से अक्षर सिंधुघाटी की लिपि से मिलते-जुलते हैं।

विकास की दृष्टि से ब्राह्मी लिपि को तीन कालों में विभाजित किया जा सकता है—(1) प्रागैतिहासिक काल (वैदिक युग से छठी शती ई० पू० तक), (2) बौद्ध काल, जब ब्राह्मी के अक्षर गोल आकार लेने लगे थे, और (3) गुप्तकाल, जिसके बाद बाह्मी आधुनिक लिपियों के रूप में विकसित हो गई। गुप्तकाल के आरम्भ में ही ब्राह्मी के दो भेद हो गए थे—दक्षिणी और उत्तरी। दक्षिणी लिपि से तेलगु और तमिल लिपियों का और बहुत बाद में कन्नड़ और मलयालम लिपियों का विकास हुआ। उत्तरी ब्राह्मी का नाम गुप्त लिपि है। इसका व्यवहार सारे गुप्त साम्राज्य में होता था। इस युग में अक्षरों के ऊपर शिरोरेखा (भले ही वह छोटी सी थी) बनने लगी और स्वरों की मात्राएँ स्पष्ट होने लगीं। तुलना कीजिए—

ब्राह्मी +

बौद्धकालीन ब्राह्मी

गुप्त लिपि



गुप्त लिपि से छठी शती में सिद्ध मात्रिका लिपि निकली जो कश्मीर से वाराणसी तक के विशाल क्षेत्र में चलती थी। कालान्तर में इसी के कुटिल या वक्र अक्षरों के कारण इसे कुटिल लिपि या कुटिलाक्षरा कहते थे। फिर इससे उत्तर भारत की बहुत सी लिपियों का विकास हुआ जिनमें देवनागरी एक है।

देवनागरी का सर्वप्रथम प्रयोग गुजरात के राजा जयभट्ट (7वीं-8वीं शती ई०) के एक शिलालेख में हुआ है। राष्ट्रकूट नरेशों और विजय नगर के राजाओं के राज्यकाल में इसका भरपूर प्रसार हुआ। इस समय यह लिपि हिन्दी प्रदेश के अतिरिक्त महाराष्ट्र और नेपाल में

प्रचलित है। सारा वैदिक और संस्कृत वाङ्मय देवनागरी लिपि में उपलब्ध है।

नाम के बारे में कई मत हैं। गुजरात में सर्वप्रथम प्रचलित होने से वहाँ के पंडित वर्ग अर्थात् नागर ब्राह्मणों के नाम से इसे नागरी कहा गया। देवभाषा संस्कृत में इसका प्रयोग होने से इसके साथ 'देव' शब्द जुड़ गया। देवताओं की उपासना के लिए जो संकेत बनाए जाते थे, उन्हें देव नगर कहते थे। वे संकेत लिपि के समान थे। वहीं से देवनागरी नाम चला। एक मत यह भी है कि पाटलिपुत्र को नगर और चन्द्रगुप्त मौर्य को 'देव' कहा जाता था। देवनगर से प्रचलित होने के कारण इसे देवनागरी कहते थे।

देवनागरी की विशेषताएँ

गुण

1. आदर्श लिपि का एक गुण यह माना गया है कि एक वर्ण से एक ही ध्वनि संकेतित होती हो। देवनागरी में यह गुण पूर्णतया विद्यमान है; उर्दू या अंग्रेजी में ऐसा नहीं है।

2. दूसरा गुण यह बताया जाता है कि एक ध्वनि के लिए एक ही वर्ण हो। यह भी केवल देवनागरी में मिलता है।

3. देवनागरी का प्रत्येक अक्षर उच्चरित होता है। अंग्रेजी में कई शब्दों में अक्षर मूक हैं, जैसे—Half में l, knife में k, Psychology में p, ऐसे मूक वर्ण देवनागरी में नहीं हैं।

4. देवनागरी व्यंजन-संयोग—क्र, प्र, क्ल, त्त, क्ष, त्र, ज्ञ, म्न, आदि—अंकित करने की सुचारु पद्धति है। इस गुण के कारण शब्दों के लेखन में थोड़ी जगह घिरती है। तुलना कीजिए—धर्म और Dharma, कृष्ण Krishna.

5. देवनागरी की वर्णमाला का वर्णक्रम वैज्ञानिक है—स्वर पहले और वह भी ह्रस्व दीर्घ क्रम से, बाद में व्यंजन और वे उच्चारण-स्थान तथा, प्रयत्न के अनुसार अर्थात् कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य आदि, और उनके अन्तर्गत पहले दो अघोष, फिर दो सघोष और पाँचवें वर्ण अनुनासिक दूसरे और चौथे महाप्राण, पहले और तीसरे वर्ण अल्पप्राण।

6. देवनागरी वर्णों के नाम उच्चारण के अनुरूप हैं। तुलना कीजिए कि उर्दू क च ल को काफ़, चे और लाम कहते हैं, अंग्रेजी में G H I J सब के नाम निराले ढंग से रखे गए हैं। नागरी सरल और सुगम है।

7. देवनागरी जिन भाषाओं के लिए व्यवहृत होती है, उनकी सभी ध्वनियों को अंकित करने में समर्थ है। अब तो इसका विस्तार करके भारत भर की भाषाओं की ध्वनियों के उपयुक्त बनाया जा रहा है। इसमें नये चिह्न जोड़े गये हैं।

8. इस लिपि के लेखन और मुद्रण के अक्षर एकरूप हैं।

9. कलाविद् बताते हैं कि सीधी रेखा की अपेक्षा वक्ररेखा अधिक सुन्दर होती है। 'वक्र' से ही 'बाँका' शब्द बना है। देवनागरी का प्रत्येक अक्षर वक्र है, इसलिए बाँका है, सुन्दर है। यह लिखावट सुगठित भी है।

10. यह लिपि स्वदेशी है। उर्दू रोमन लिपि विदेशी है।

11. देवनागरी लिपि का प्रयोग बहुत व्यापक है। संस्कृत, नेपाली, हिन्दी, मराठी की तो यह एकमात्र लिपि है, परन्तु पंजाबी और गुजराती के लिए भी इसका प्रयोग होता रहा है।

क ख ग घ ङ

12. यह लिपि भारत की अनेक लिपियों के निकट है, इसलिए सब को सुलभ है। इसी से हमारे नेता कहते आ रहे हैं कि यदि भारत की भाषाओं की एक लिपि हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है। भावात्मक एकता के लिए तथा नाना भाषाओं को सीखने के लिए यह आवश्यक भी है।

दोष

1. कोई भी लिपि नितान्त निर्दोष नहीं होती। वास्तव में जो लिपि मूलतः जिस भाषा के लिए बनती है वह इस भाषा के लिए तो पर्याप्त और उपयुक्त होती है, परन्तु कालान्तर में उस भाषा की ध्वनियों में विकार आ जाता है और लिपि वैसी ही बनी रहती है। इसी कारण से हिन्दी में ऋ, ङ, ञ, अथवा ष की अब कोई आवश्यकता नहीं। ऍ और ऑ (ह्रस्व) इस लिपि में हैं नहीं। व्यंजन के रूप में जो अ निहित है, वह कहाँ उच्चरित होता और कहाँ नहीं, यह समस्या है। इससे वर्तनी में विविधता आ गई है।

2. त्वरालेखन के लिए देवनागरी उपयुक्त नहीं है। एक शब्द लिखने के लिए कलम बार-बार आगे-पीछे, नीचे-ऊपर उठती है। सुझाव दिया गया कि शिरोरेखा हटा दी जाए, परन्तु इतने भर से समस्या हल नहीं होगी।

3. बहुत-से अक्षर एक-से अधिक ढंग से लिखे जाते हैं ; जैसे अ, अ, ध ध, भ भ, श श, आदि।

4. मुद्रण में इतनी गति नहीं हो सकती जितनी रोमन लिपि में, क्योंकि वर्णों और संयुक्ताक्षरों, मात्राओं आदि को मिलाकर 403 टाइप रखने पड़ते हैं।

5. मात्राएँ आगे ा पीछे ि नीचे ु ू और ऊपर े ै सब जगह लगानी पड़ती हैं। इससे मुद्रण, टंकण और वाचन में दिक्कत होती है।

6. ख को रव भी पढ़ा जा सकता है।

7. संयुक्त अक्षरों को लिखने की कई पद्धतियाँ हैं ; जैसे—क्त क्त, च्च च्च, ल्ल ल्ल।

सुधार

देवनागरी लिपि में हिन्दी लेखक और मुद्रण की दृष्टि से जो दोष हैं, उनकी ओर कई विद्वानों का ध्यान गया है और समय-समय पर उनका निराकरण करने के लिए सुझाव भी आते रहे हैं। पहले इस ओर महान् राष्ट्रीय नेता और लेखक-संपादक बालगंगाधर तिलक का ध्यान गया। 1904 में उन्होंने अपने पत्र 'केसरी' के लिए कुछ टाइपों को मिलाकर और उनके हेर-फेर से उनमें कमी के प्रयोग आरम्भ किये और 1926 तक टाइपों की छँटाई करते-करते 190 टाइपों का एक फांट बना लिया जिसे 'तिलक फ़ांट' कहते हैं। लगभग इसी समय महाराष्ट्र के ही सावरकर बंधुओं ने स्वरों के लिए अ की बारहखड़ी तैयार की, जैसे—अ से ही अि अी, अु, अू, अे, अै जबकि ओ औ तो चलते ही हैं। वर्धा में इस सुधार को कई वर्ष तक अपनाया जाता रहा। महात्मा गाँधी के 'हरिजन सेवक' में भी बारहखड़ी का प्रयोग किया जाता था। डॉ० श्यामसुन्दर दास ने सुझाव दिया कि ङ ञ् के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया जाये। (जैसे—अङ्क या मञ्च की जगह अंक, मंच)। डॉ० गोरखप्रसाद मात्राओं को व्यंजन के बाद दाहिने हाथ अलग रखने के पक्ष में थे (जैसे क ु ल, ब ै ल)। काशी के श्रीनिवास ने सुझाया कि महाप्राण वर्ण हटाकर अल्पप्राण के नीचे कोई चिह्न लगा दिया जाए। इससे भी वर्णों की

संख्या में कमी होगी।

सन् 1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के सभापतित्व में नागरी लिपि सुधार समिति बनाई गई जिसके संयोजक काका कालेलकर थे। संक्षेप में इस समिति की सिफारिशें निम्नलिखित थीं—

1. शिरोरेखा लिखने में भले ही न हो, छपाई में रहनी चाहिए।
2. इ की मात्रा (ि) बाईं ओर ही रहे उ ऊ, ऋ ए ऐ, ओ औ की मात्राएँ और अनुस्वार चिह्न व्यंजन के बाद हटाकर अलग से लगाये जायें।
3. रेफ (र्) को भी अलग से व्यंजन के बाद लगाया जाये ; जैसे ध र्म, स र्वे, से र्वा।
4. संयोग में र दूसरे स्थान पर हो, तो उसे पूरा लिया जाये, और उससे पहले के व्यंजन का आधा ; जैसे प्र, त्र।
5. सावरकर बंधुओं की सुझाई गई बारहखड़ी को स्वीकार किया जाये।
6. विराम चिह्न (। ; , आदि) पूर्ववत् बने रहें।
7. ध भ में गुजराती घुंडी लगाई जाये (ध भ)।
8. कोई व्यंजन-संयोग नीचे ऊपर (द्व द्ध) न हों।

सन् 1945 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने श्रीनिवास के सुझाव को और अ की बारहखड़ी को स्वीकार नहीं किया।

बारहखड़ी को स्वीकार नहीं किया।

1947 में उत्तर प्रदेश सरकार ने आचार्य नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसने सब सुझावों का आकलन और अध्ययन करने के बाद अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कीं—

(1) अ की बारहखड़ी भ्रामक है। (2) श्रीनिवास द्वारा प्रस्तुत अल्पप्राण व्यंजन के नीचे S चिह्न लगाकर महाप्राण बना लेने का भेद स्वीकार्य नहीं है। (3) किसी व्यंजन के नीचे दूसरा व्यंजन न जोड़ा जाये। (4) मात्राएँ यथास्थान बनी रहें, परन्तु उन्हें व्यंजन से हटाकर रखा जाए। (5) अनुस्वार और पंचमाक्षर (ङ् ञ् ण् न् म्) की जगह ˉ का प्रयोग किया जाये। (6) शिरोरेखा लगाई जाये। (7) संयुक्त व्यंजनों में पहले व्यंजन की पाई हटा दी जाए और शेष व्यंजन हलन्त करके लिखे जायें। (8) अ, झ, ध, भ, क्ष, त्र के स्थान पर अ झ ध भ क्ष त्र का प्रयोग मान्य हो, श्र बना रहे। (9) ळ को वर्णमाला में स्थान दिया जाये।

इन सुझावों को विभिन्न राज्यों के प्रधानमंत्रियों और विद्वानों की एक सभा में रखा गया। इस सभा ने दो सुझाव और जोड़ दिये—(1) ख को ख और इ की मात्रा की पाई छोटी करके दाहिने लिखी जाये। इस ी मात्रा का बड़ा विरोध हुआ। 1957 में इ की मात्रा ि के पूर्व प्रयोग को ही माना गया और उसे पूर्ववत् व्यंजन से पहले रखा जाना स्वीकार किया गया।

भारत सरकार ने इन सुझावों को मान्यता दे रखी है। तब से प्रायः टंकण और मुद्रण में और सरकारी कामकाज के लिए और अधिकतर पाठ्यपुस्तकों में इन्हीं के अनुसार काम चल रहा है।

S - लुप्ताकार

मानकीकरण

समस्याएँ—उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि देवनागरी लिपि में जो सुधार हुए वे टाइप और मुद्रण की सुविधा को ध्यान में रखकर किये गए। टाइपों की गिनती अवश्य कम हो गई,

तो भी बहुत से छापेखानों में अभी पुराने रूप ही चल रहे हैं। फलस्वरूप, प्रायः लोगों की लिखाई में दो-दो तरह के अक्षर पाये जाते हैं—

अ अ, ख ख, छ छ, झ झ, ण ण, ध ध, भ भ, ल ल, श श।

इस प्रकार सुधारों के कारण द्विरूपता आ गई है जो लिपि के मानकीकरण में बाधा ही नहीं, एक नई समस्या बन गई है। अंकों में भी एक ओर तो यह द्विरूपता है कि कुछ लोग १, ५, ६, ९ लिखते हैं और कुछ लोग १, ५, ६, ९ और दूसरी ओर कहीं देवनागरी अंक चलते हैं और कहीं अन्तर्राष्ट्रीय अंक (1 2 3 4 5 6. . . .)। कुछ लोग अरबी-फ़ारसी के क़ ख़ ग़ ज़ फ़ की उपेक्षा करके उनके स्थान पर बिना नुक्ता के सरल क ख ग ज फ लिखते हैं और शुद्ध रूप निभा रहे हैं; कुछ गैया, मैया, भैया, को गइया, मइया भइया लिखना चाहते हैं; कुछ अंग्रेजी उच्चारण के अनुरूप डॉक्टर, कॉल, ऑफ़िस आदि में चंद्र का कड़ाई से प्रयोग करते हैं, और कुछ नहीं, कुछ डौक्टर, कौल, औफिस भी चला रहे हैं। कुछ के व्यवहार में मेस, चेस, या पेन के ऊपर भी चंद्र रहता है, कुछ के नहीं, और कुछ मॅस, चॅक, पॅन लिखते हैं। अनुस्वार (बिंदी) और अनुनासिक (चंद्रबिंदु) के प्रयोग में भी कोई नियमबद्धता नहीं है।

किन्हीं विद्वानों का सुझाव है कि ङ ञ का कहीं व्यवहार नहीं होता, इन्हें वर्णमाला में ही न रखा जाये। कोई-कोई कहते हैं कि चीनी शब्दों या नामों को लिखना हो तो इनकी आवश्यकता रहेगी। इन्हें संस्कृत और विदेशी शब्दों के लिए सुरक्षित रखा जाए।

यह भी सुझाया गया है कि हिन्दी में व से सूचित दो ध्वनियाँ हैं, जैसे (1) वन, विष, वैर में दंत्योष्ठ्य है और (2) कौवा, ज्वर में द्वयोष्ठ्य, अतः इनके दो लिपिचिह्न होने चाहिए।

आवश्यकता रहेगी। इसे संस्कृत और विदेशी शब्दों के लिए सुरक्षित रखा जाए।

यह भी सुझाया गया है कि हिन्दी में व से सूचित दो ध्वनियाँ हैं, जैसे (1) वन, विष, वैर में दंत्योष्ठ्य है और (2) कौवा, ज्वर में द्वयोष्ठ्य, अतः इनके दो लिपिचिह्न होने चाहिए।

पंचमाक्षर का प्रयोग किया जाये या अनुस्वार का, इस सम्बन्ध में भी द्विरूपता विद्यमान है ; जैसे—दण्ड दंड, सन्त संत, पम्प पंप। कुछ लोग 'संबंध' लिखते हैं, कुछ 'सम्बन्ध' और सम्बंध। जलयान, स्वर्णयुग आदि समासों के बीच में योजक चिह्न (-) लगाया जाये या नहीं।

जगत, भगवान, पश्चात आदि में हल् चिह्न (्) लगाया जाये या नहीं, ने, को, में, आदि परसर्गों को शब्द के साथ सटाकर लिखा जाये या अलग, पूर्णविराम का चिह्न (।) हो या (.)—इन मामलों में भी मतैक्य नहीं है। द्विविधा विद्यमान है।

संयुक्त व्यंजन भी कई तरह से लिखे जा रहे हैं—(1) पहले व्यंजन की घुंडी या पाई हटाकर और आगे-पीछे, जैसे—कल्प, रक्त, बग्घी, सत्कार ; (2) नीचे ऊपर ; जैसे बुड्ढा, चिह्न, सुप्त पिल्ला ; (3) पहले व्यंजन को हलन्त करके ; जैसे—बुड्ढा, चिह्न, कर्ता। हलन्त करके संक्षेप बनाने की प्रक्रिया से एक भयानक समस्या पैदा हो गई है। द्वितीय, बुद्ध, चिह्नत लिखा जाये या द्वितीय, बुद्धि और चिह्नित। उच्चारण की दृष्टि से दूसरा रूप ठीक लगता है, परन्तु यदि यह संयुक्त (जुड़वाँ) अक्षर है तो इसके बीचों-बीच की मात्रा लाकर इसे फाड़ा क्यों जाए। कितना भद्दा लगता है द्वि (द्वि के लिए)। परन्तु केन्द्रीय सरकार की नीति यही है।

इस प्रकार की अनेक समस्याएँ हैं जिनका निराकरण अपेक्षित है।

शिक्षा मन्त्रालय ने इस दिशा में कई स्तरों पर प्रयास किया है। सन् 1966 में 'मानक देवनागरी वर्णमाला' प्रकाशित की गई। इसके अनुसार देवनागरी के जो वर्ण एक से अधिक रूपों में लिखे जाते थे, उनके स्थान पर प्रत्येक वर्ण का एक ही मानक रूप निर्धारित किया गया। लिपि की समस्या वर्तनी से और वर्तनी की भाषा के मानकीकरण की समस्या से जुड़ी हुई है। शिक्षा मंत्रालय ने कई भाषाविदों के सहयोग से वर्तनी की विभिन्न समस्याओं पर विचार करने

के बाद 1967 में 'हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण' नामक पुस्तिका प्रकाशित की। बाद में इनके सुझावों पर विस्तृत चर्चा होती रही जिसमें भाषाविदों, लेखकों, पत्रकारों और हिन्दीसेवी संस्थाओं ने भाग लिया। 1983 में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से 'देवनागरी लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण' का प्रकाशन हुआ। इसके सुझावों का संक्षेप नीचे दिया जा रहा है—

1. देवनागरी वर्णमाला तथा अंकों का स्वरूप

(इनमें अ, ख, छ, झ, ण, ध, भ और श का रूप ध्यान में रहे।)

स्वर—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

मात्राएँ—ा, ि, ी, ु, ू, ृ, े, ै, ो, ौ

अनुस्वार— ं (अं), अनुनासिक ँ, विसर्ग : (अः)

व्यंजन— क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण त थ द ध न
प फ ब भ म य र ल व
श ष स ह

परम्परागत संयुक्त व्यंजन—क्ष त्र ज्ञ श्र

हल् चिह्न— (ड्) ; गृहीत वर्ण—ऑ, ख़ ज़ फ़

देवनागरी अंक—१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ ०

अन्तर्राष्ट्रीय अंक— 1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

(संविधान के अनुसार संघ के राजकार्य के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग होगा, परन्तु, राष्ट्रपति संघ के किसी भी राजकीय प्रयोजन के लिए भारतीय अंकों के देवनागरी रूप प्रयोग को भी प्राधिकृत कर सकते हैं।)

2. संयुक्त वर्ण

(क) खड़ी पाई वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाना चाहिए ; जैसे—

ख् + य = ख्य (व्याख्या)	ग् + ध = ग्ध (मुग्ध)
घ् + न = घ्न (कृतघ्न)	च् + छ = च्छ (अच्छा)
ज् + य = ज्य (राज्य)	ण् + य = ण्य (पुण्य)
त् + य = त्य (सत्य)	

(नोट—त् + र = त्र और त्र दोनों रूप मान्य हैं।)

थ् + य = थ्य (तथ्य)	ध् + व = ध्व (ध्वनि)
न् + द = न्द (कन्दमूल)	प् + त = प्त (प्राप्त)
ब् + ध = ब्ध (प्रारब्ध)	भ् + य = भ्य (सभ्यता)
म् + य = म्य (रम्य)	य् + य = य्य (शय्या)
ल् + ल = ल्ल (उल्लेख)	व् + य = व्य (व्यक्ति)
श् + ल = श्ल (श्लोक)	ष् + ट = ष्ट (कष्ट)
स् + व = स्व (स्वयं)	क्ष् + म = क्ष्म (यक्ष्मा)

निष्कर्ष

देवनागरी लिपि के सम्बन्ध में जो विचार-विमर्श होता रहा है, उसके दो पक्ष हैं—एक सुधार का और दूसरा सुधार से पैदा हुए बिगाड़ को दूर कर लिपि के मानकीकरण करने का अर्थात् उसमें एकरूपता लाने का सुधार तो टाइप और छपाई की कुछ समस्याओं को दृष्टि में रखकर किये गए थे। भ ध लिखने में या छापने में ऊपर थोड़ी स्याही फैल जाती तो उन्हें म घ पढ़ा जाता था, इससे अर्थ ही बदल जाता ; जैसे—भर का मर, भूसा का मूसा, भूत का मूत, और धन का घन, धर्म का घर्म, धान का घान तथा धुन का घुन पढ़ा जाता। यह तो अच्छा हुआ कि हमें दो स्पष्ट अक्षर ध और भ मिल गए जिसमें घुंडी है। अब भले ही ऊपर स्याही भर जाए, कोई अन्तर नहीं पड़ता। ये दोनों लिपिचिह्न गुजराती और मराठी देवनागरी में विद्यमान थे। इसी प्रकार के सुधारों के पीछे कभी कोई तर्क अवश्य था। परन्तु लिपि में द्विरूपता तो आ ही गई। मानकीकरण के लिए इस द्विरूपता को समाप्त करना आवश्यक हो गया। यह काम शिक्षा मंत्रालय के केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने बड़े-बड़े विद्वानों के सहयोग से किया। उनके सुझावों का कार्यान्वयन भी हुआ है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् की सभी पाठ्यपुस्तकें इन्हीं के आधार पर लिखी जाती हैं।

राज्यों में भी सरकारी स्तर पर इन्हीं नियमों का पालन किया जाता है, यद्यपि वैयक्तिक रुचियों के कारण थोड़ा-बहुत हेर-फेर कर लिया जाता है। फिर भी, विद्यार्थियों की वर्तमान पीढ़ियाँ उसी वर्णमाला का प्रयोग करती हैं और लिपि-सम्बन्धी शेष नियमों का भी उचित पालन करती हैं। वर्तमान समय में द्विरूपता पुरानी पीढ़ी के लोगों के कारण है और यह द्विरूपता उसी पीढ़ी के साथ समाप्त हो जाएगी। लिपि का इतिहास बताता है कि इसमें परिवर्तन की गति बहुत धीमी होती है। भारतवासी परम्परा से रूढ़िप्रिय हैं। जर्मन लिपि हमारे देखते-देखते समूल बदल गई है। परन्तु भारत में कोई परिवर्तन लाना सहज नहीं होता।

हमारा आग्रह है कि हिन्दी निदेशालय की कुछ सिफारिशों पर पुनर्विचार होना चाहिए। एक तो हल् चिह्न के बारे में जो छूट दी गई है, वह हमें ग्राह्य नहीं है, क्योंकि 'जगत' यदि हलन्त नहीं है तो जगत+नाथ से जगन्नाथ नहीं बनेगा, पश्चात् यदि हलन्त न हो तो पश्चात्+ताप से पश्चात्ताप नहीं बनेगा। इसी तरह की कठिनाई अन्य शब्दों में सन्धि के नियमों को लागू करने में हो जाएगी और हो रही है दूसरे हल् युक्तव्यंजन-संयोगी के बीच में इ की मात्रा घुसेड़ देने से

व्यंजन 'संयुक्त' नहीं रह जाते।

कुल मिलाकर, कहा जा सकता है कि लिपि का मानकीकरण बहुत बड़ी समस्या नहीं है। यदि हमारे अध्यापक ध्यान दें और मुद्रणालय केवल निर्धारित चिह्नों का प्रयोग करें, तो निकट भविष्य में ही देवनागरी का मानकीकृत रूप स्थिर हो जाएगा।

लिपि और भाषा

'भाषा' शब्द भष् धातु से बना है, जिसका अर्थ है बोलना। भाषा का आधार ध्वनि है जो मानव मुख से निकलती हो और अर्थवान् हो। यह श्रव्य और कर्णगोचर होती है। लिपि का आधार लिखित संकेत होते हैं। लिपि दृश्य और दृष्टिगोचर होती है। एक ही भाषा को लिखने के लिए लिपिचिह्न कई तरह के हो सकते हैं ; जैसे—हिन्दी देवनागरी में तो लिखी ही जाती है, इसे बँगला, तमिल या रोमन अक्षरों में भी लिख सकते हैं। भाषा को एक व्यक्ति समझा जाये तो लिपि उस व्यक्ति का चित्र या फोटो है, जो अन्तर एक व्यक्ति और उसके फोटो में है, वही अन्तर भाषा और लिपि में है। भाषा असल है, लिपि उसकी नकल है। ध्वनि का परिसर बहुत सीमित होता है, वह कुछ मीटर तक पहुँच पाती है, रात में या खुले में उसकी पहुँच कुछ अधिक दूर तक होती है, परन्तु रास्ते में रुकावट हो तो वह दूरगामी नहीं हो पाती। भले ही आज रेडियो और टी० वी० ने ध्वनि को निःसीम बना दिया है, फिर भी लिपि की तुलना में वह दिशा और काल की सीमा में अधिक बँधी हुई होती है। ध्वनि तात्कालिक, नश्वर और वायवी है, लिपि चिरस्थायी है। युग-युग का साहित्य उसमें ही सुरक्षित है। ध्वनि की पकड़ नहीं है, लिखित विषय को हम बार-बार देख सकते हैं, उस पर चिन्तन-मनन कर सकते हैं ध्वनि उपस्थित व्यक्ति के लिए है, परन्तु लिपि के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपनी बात कहीं भी, देश-विदेश में पहुँचा सकता है ; आनेवाली पीढ़ियों तक के लिए अपने भाव और विचार छोड़ सकता है। हमारी साहित्यिक, सामाजिक, राजनीति या आर्थिक मर्यादाएँ लिपि के कारण पीढ़ियों से होती हुई हम तक पहुँची हैं और उनके आधार पर हम आगे बढ़े हैं। यह उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। प्रत्येक लिपि का अपना भी एक ऐतिहासिक महत्त्व होता है। देवनागरी लिपि को ही ले लें। इसका विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है जो संसार की लिपियों में सबसे पुरानी है, वैदिक युग से चली आ रही है। इसी में हमारा वैदिक साहित्य, पौराणिक साहित्य, हमारे शास्त्र, हमारे महाकाव्य, हमारी संस्कृति, हमारे सर्वयुगीन विचारों का लेखा-जोखा सुरक्षित है।

देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा का मानकीकरण

यदि लिपि न हो तो किसी भी भाषा का रूप स्थिर नहीं हो सकता। बोलचाल की भाषा में उच्चारण, व्याकरण और वाक्ययोजन में विविधता रहती है। ज्यों-ज्यों भाषा के लिखित रूप का विस्तार होता है, त्यों-त्यों उसमें एकरूपता का तकाज़ा बढ़ता जाता है। हिन्दी के मानकीकरण में वर्तनी का मुद्दा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसका सीधा सम्बन्ध लिपि से है। देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के कारण हमारी वर्तनीगत समस्याएँ अधिकांशतः सुलझ गई हैं। इसके लिए नियम निर्धारित हो सके हैं—देखिए अगला अध्याय। यह अलग बात है कि लोग अपनी पुरानी आदतों के कारण उन नियमों का पालन नहीं कर पा रहे हैं। व्याकरण के मानकीकरण में भी देवनागरी लिपि ने अपना योग दिया है। पहली बात यह है कि व्याकरण प्रायः लिखित भाषा का होता है। व्याकरण के सारे नियम एक साथ लिपिबद्ध होकर हमारे सामने आ जाते हैं।

उदाहरण-स्वरूप पुंल्लिग से स्त्रीलिंग बनाने के लिए सभी प्रत्ययों को एक जगह लिखकर समझ-समझा सकते हैं कि—नी, आनी, इया, इन आदि स्त्री प्रत्यय हैं, जैसे मोरनी, नौकरानी, चिड़िया, धोबिन में। हम क्रिया की सारी कालरचना लिपिबद्ध करके एक पृष्ठ पर या ब्लैकबोर्ड पर दिखा सकते हैं। ऐसे में समझना और याद कर लेना सुगम हो जाता है। फिर लिपिबद्ध कर लेने पर ही हम समय-समय पर निरीक्षण कर सकते हैं कि किन व्याकरणिक कोटियों में मानक रूप स्थिर हो गए हैं और किन में शेष हैं। हमारे शब्दकोश भी तो लिपिबद्ध हैं। ऐसा न हो तो हम जान नहीं पाते कि शब्दभंडार के मानकीकरण की क्या-क्या समस्याएँ हैं और उनको कैसे सुलझाया जाये। अगले अध्याय में खड़ी बोली हिन्दी के मानकीकरण पर खुला प्रकाश डाला गया है जिससे स्पष्ट हो जाएगा कि इस भाषा के मानकीकरण का प्रश्न घनिष्ठता के साथ देवनागरी लिपि से जुड़ा हुआ है।

□□□